21वीं सदी में कोरेगाँव

संपादकः एच.एल. दुसाध • फ्रैंक हुजर

21वीं सदी में कोरेगांव

संपादक

एच. एल. दुसाध–फ्रैंक हुजूर

बहुजन डाइवर्सिटी मिशन

नई दिल्ली-110047

प्रथम संस्करण : 2018
द्वितीय संस्करण : 2020

प्रकाशक : **बहुजन डाइवर्सिटी मिशन**
एफ-196, आया नगर एक्स, फेज-6, नई दिल्ली-110047
E-mail : hl.dusadh@gmail.com
मो. 9654816191

© **प्रकाशक**

मूल्य : 100.00 रुपये

रचना : 21वीं सदी में कोरेगांव
संपादक : एच. एल. दुसाध–फ्रैंक हुजूर
शब्दांकन : कम्प्यूटेक सिस्टम, शाहदरा, दिल्ली-32
आवरण : राकेश यादव
मुद्रक : क्विक ऑफसेट, दिल्ली-110094

समर्पित

पलासी युद्ध के समरवीरों की
काबिल संतान जयराम प्रसाद सिंह को

अनुक्रम

सम्पादकीय 7

आधुनिक भारत के शिलान्यासी : दुसाध 19

आंबेडकरवाद से आतंकित : आर्यपुत्र–21, अस्पृश्य भारतीयों ने मूल भारतीय बहुजन समाज की मुक्ति के लिए ही भारत जय किया था–21, आधुनिक भारत के इतिहास की बुनियाद है : पलासी युद्ध–28, पलासी युद्ध में यदि दुसाधों ने योगदान नहीं किया होता तो!–29, पलासी युद्ध की संतानें!–30, नेताजी सुभाष बोस : देशभक्त या देशद्रोही!–30, देशद्रोहिता की प्रतियोगिता में मिलीं उपाधियां!–31, आर्यवादी मीडिया के सौजन्य से : देशद्रोही बने देश-प्रेमी!–32, यदि दुसाध पलासी युद्ध हार गये होते तो!–32, महारों को योद्धा जाति प्रमाणित करवाये : डॉ. आंबेडकर–33, ब्रिटिश भक्त : मोहनदास कर्मचंद गांधी!–34, आर्य-पुत्रों द्वारा 1857 में ब्रिटिश शक्ति का जयगान–36, मुसलमान से लेकर अंग्रेज काल तक : आर्य पुत्रों ने किया पदलेहन परम्परा का निर्वाह–38, आर्यपुत्रों द्वारा अनंत काल के लिए ब्रिटिश राज की कामना–38, दुसाधों की युगान्तकारी भूमिका की याद में बने : कोरेगांव जैसा स्मारक–40, **ब्रितानी साम्राज्यवाद के पीछे भी : हिन्दू आरक्षण** एच.एल. दुसाध–40, असल सर्वहारा : दलित–40, आधुनिक भारत के शिलान्यासी–41, भारत के प्रथम घुसपैठिये!–42, अस्पृश्यों का बलिदान व्यर्थ नहीं गया–42, मेरी आशंकायें–43, नव वर्ष पर याद करें : **अछूतों की ऐतिहासिक भूमिका!** एच.एल. दुसाध–45, पलासी युद्ध का इम्पैक्ट!–45, पलासी युद्ध के असर को चालाक ब्राह्मणों ने पढ़ लिया–45, पलासी और कोरेगांव का सुफल–46

भीमा-कोरेगांव को हमें जानना चाहिए–प्रेम कुमार मणि 49

कोरेगांव प्रकरण से अंजान : मीडिया और बुद्धिजीवी!–49, इतिहास की अभिनव और वैज्ञानिक व्याख्या!–50, अंग्रेजों की पहली जीत भी दलितों के कारण–50, **कोरेगांव : एक ऐतिहासिक प्रतिशोध** दिलीप मंडल–54, भीमा कोरगांव न होता, तो यह देश न बनता–54, कोरेगांव : एक ऐतिहासिक प्रतिशोध–54, मंगल पांडे किसकी फौज में था!–55, 1818 में अगर पेशवाई जीत जाती?–55, क्या ब्राह्मण इतिहास के कुकर्मों की माफी मांगने की वैश्विक परम्परा का पालन करेंगे–56, गुलामों का कोई देश नहीं होता–57, यह एक सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति है–58, **फेसबुक पर विद्वानों की टिप्पणियां**–59, अब आपका शौर्य दिवस नहीं चलेगा : Rajesh Kumar Ravi–59, असली शौर्य दिवस महारों ने दिया : Bhai Tej Singh–59, मामला दलित पेशवाई संघर्ष का है : Dharmendra Kr Jatav–60, मोदी का तथाकथित ब्राह्मण गुरु : Shailendra Mani–60, महाराष्ट्र ने हौसला बढ़ाया की नहीं : Chetan Tambe–60, सवाल देसी-विदेशी नहीं न्याय का है : Manoj abhigyan–60, भारतवासियों के लिए शिक्षा के दरवाजे खुले : Harikeshwar Ram–61, क्या हुआ कोरेगांव में : Shreyat bauddh–61, चित्तपावन विचारधारा देश के लिए घातक : Satyendra Ps–62, आखिर किस दलदल से निकलने के लिए महारों ने अंग्रेजों का साथ दिया : अनीता स–62,

समतावादियों का शौर्य दिवस : Sanjeev Chandan–63, **सुनों वामपंथियों** मयंक सक्सेना–63, उसी वर्ष मार्क्स का जन्म हुआ था–63, **हमारे 'शौर्य दिवस' से आपको परेशानी क्यों है**? चन्द्रभूषण सिंह यादव–64, हिन्दू मतलब...–64, हमारे पुरुषों की हत्या का जश्न क्यों मनाते हो!–66, **यह कैसा दौर है...**डॉ. लाल रत्नाकर–67, कोरेगांव की घटना के पीछे बड़ी साजिश!–68, पेशवाई दौर में दलितों की स्थिति!–69, **यह सिर्फ दलितों पर नहीं समूची आधुनिक भारतीय राष्ट्रीयता पर, संविधान और लोकतंत्र पर हमला है** आशुतोष कुमार–70, राणा प्रताप की लड़ाई भारतीय राष्ट्रीयता की लड़ाई नहीं–70, पेशवाई प्रतिक्रियावाद–71, **कोरेगांव हिंसा की लीपापोती में क्यों लग गए बीजेपी के दलित सांसद? और मोदी जी चुप क्यों हैं**? पुष्परंजन–71 बीजेपी के दलित सांसदों का गोल-मटोल रवैया–71, महाराष्ट्र में दलितों का गुस्सा कौन भड़का रहा है? शिवसेना का इरादा क्या है?–72, **राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ किस हद तक गिर सकता है, भीमा कोरेगांव से जानें** बापू राउत–73, क्या है भीमा कोरेगांव का इतिहास?–73, कोरेगांव युद्ध का असर–74, सभाजी भिडे की भूमिका–75, **कोरेगांव सम्मेलन पर हमला या संविधान पर हमला!** राजवंशी जे.ए. आंबेडकर–77, पेशवा : विषैले सांप!–77, जश्न की जरूरत क्यों?–78, संघ की विचारधारा का परीक्षण–78, **सुनो मेरा भी इतिहास!** अनिल चमड़िया–80, राष्ट्र और धर्म का एक ही अर्थ है : वर्चस्व की सत्ता–80, रट्टामार राष्ट्रवाद–80, मराठा बनाम दलित की लड़ाई पेशवाई को सुरक्षित कर देती है–81, **सवाल पर टकराव का जोर पकड़ता सिलसिला** प्रो. रतनलाल–82, मनु-स्ट्रीम मीडिया का जनेऊ कनेक्शन–82, सुनियोजित हमला!–83, परंपरा और आधुनिकता का टकराव–84, **राजनीति को पुनर्परिभाषित करता महार-पेशवा संघर्ष...क्या सच में जातिवाद के खिलाफ ही लड़े थे महार**? आनंद तेलतुंबडे–85 नई पेशवाई यानी हिन्दुत्ववादी ताकतों की उभरती ब्राह्मणवादी हनक–85, ब्रिटिश सेना में दलितों का संख्यानुपात ज्यादा–86, कहां बदले महारों के हालात–87, **ऐतिहासिक नायकों की तलाश में दलित** राम पुनियानी–88, आधुनिक पेशवाई–88, पेशवाओं का शासन घोर ब्राह्मणवादी–89, दलितों में बढ़ता असंतोष–90

कोरेगांव पार्ट-2 **93**

ब्राह्मणवादी कार्पोरेट पूंजीवाद यानी नई पेशावाई के खिलाफ खड़े लोग देश के शत्रु घोषित : Siddharth Ramu–93, अब अभिव्यक्ति के खतरे उठाने होंगे, प्रेम कुमार मणि–94, यह राज्यसत्ता के निरंकुश होने का संकेत है : Urmilesh Urmil–96, क्या मोदी जैसे व्यक्ति को कोई मारने की साजिश रच सकता है! : HL Dudadh–96, इन चेहरों में आखिर क्या है : Sobran Kabir Yadav–97, वे मामूली लोग नहीं है : Dilip C Mandal–97, आपकी लड़ाई दोहरी है : Sanjeev Chandan–98, इलीट लोगों से पॉलिटिकल आंदोलन को दूर रखो : Dinesh Kumar–98, लगता है इमरजेंसी की घोषणा होने वाली है : अरुंधति राय–99, उनकी राजनीति, हमारे दिलासे : संदर्भ पांच गिरफ्तारियां : Avishek Srivastava–100, बीजेपी राजनीतिक दल नहीं राजनीतिक आपदा : पीबी सावंत जस्टिस (रिटायर्ड)–101, परिषद को इन लोगों के आने से फायदा हुआ था–101, कबीर कला मंच पर छापा–102, अभी गिरफ्तारी की वजह–102, संविधान बदलना चाहती है बीजेपी–102, मोदी पूरी तरह सुरक्षित हैं–Vikash Narayan Rai– सुधा की गिरफ्तारी को एसपीजी टेस्ट से गुजारना चाहिए!–103

सम्पादकीय

1 जनवरी 2018 बहुजन नजरिये से नयी सदी के सबसे महत्वपूर्ण दिवस के रूप में चिन्हित हो चुका है। उस दिन भीमा कोरेगांव में लाखों की संख्या में दलित उपस्थित हुए। मकसद था उन महार समरवीरों को आदरांजलि देना, जिन्होंने ठीक 200 साल पहले कोरेगांव के समर क्षेत्र में अद्भुत शौर्य प्रदर्शन किया था। उस दिन 500 महारों ने अंग्रेजों का संगी बनकर अरबों,गोसाईं, मराठों, ब्राहमण इत्यादि से युक्त पेशवाओं की 28,000 की विशाल सेना को शिकस्त देकर एक इतिहास रचा था। लोग मानते हैं,कोरेगांव में अस्पृश्य महारों ने जिस शौर्य का दृष्टान्त कायम किया था, उसकी गिनती दुनिया के इतिहास की चुनिन्दा लड़ाइयों में होती है। इस महान युद्ध की स्मृति ने अंग्रेजों ने जो विजय स्तम्भ बनाया, उसमें 49 शहीदों के नाम खुदे गए, जिनमें 22 महार थे। महारों की इस ऐतिहासिक भूमिका को सर्वप्रथम पहचाना डॉ.आंबेडकर ने। इसलिए वे हर साल 1 जनवरी को अपने पुरुखों के शौर्य से प्रेरणा लेने के लिए भीमा कोरेगांव आते रहे। कालांतर में यह क्रम जोर पकड़ता गया। कांशीराम भी यहाँ समय-समय पर आते रहे। बीसवी शाताब्दि के शेष दशक में दलित इतिहासकारों द्वारा इतिहास के पुनर्लेखन से इस जगह की महत्ता बढ़ती गयी : साथ ही हर साल 1 जनवरी को यहाँ बढती गयी दलितों की भीड़। चूँकि 2018 की 1 जनवरी को उस शौर्य दिवस के 200 साल पूरे हो रहे थे, इसलिए इस बार लाखों की तादाद में दलितों के आने की सम्भावना थी और वे आये भी।

इस शौर्य दिवस के जरिये दलितों में विस्तार पाती इतिहास चेतना का इल्म उस वर्ग के लोगों को भी था, जिसके खिलाफ अस्पृश्यों ने शौर्य का प्रदर्शन किया था। लिहाजा वे 2018 की 1 जनवरी को इसमें विघ्न डालने की मुकम्मल तैयारी कर लिए और अपने मंसूबों को अंजाम भी दे दिया, जिसमें एक व्यक्ति की मृत्यु सहित कई लोग घायल हो गए और कई गाड़ियों को जला दिया गया। इसके प्रतिवाद में दलित संगठनों द्वारा धरना-प्रदर्शन और बंद का आयोजन किया गया। लेकिन दुःख की बात यह रही कि जिन लोगों ने भीमा कोरेगांव के दंगों के विरोध में धरना-प्रदर्शन किया,उन्हें कॉम्बिंग ऑपरेशन के जरिये अरेस्ट किया गया, किन्तु शौर्य दिवस के जश्न में दंगा शुरू करने वालों पर कोई कार्रवाई ही नहीं हुई (पेज-)। लेकिन बात वहीं ख़त्म नहीं हुई। उसके बाद इसे लेकर गंगा-जमुना में ढेरों पानी बह चुका है। इसी सिलसिले में गत 28 अगस्त को वामपंथी विचारधारा से जुड़े देश के कुछ प्रख्यात लेखक /एक्टिविस्टों को प्रधानमंत्री की हत्या की साजिश रचने के जुर्म में गिरफ्तारी हुई। 1 जनवरी से लेकर 28 अगस्त,2018 तक की इन सब घटनाओं पर पुस्तक के अध्याय दो और तीन में विस्तार से रोशनी डाली गयी है, जिसे पढ़कर पाठक खुद ही एक निष्कर्ष पर पहुचने में सफल हो जायेंगे।

बहरहाल पुस्तक को पाठकों के बीच लाने का मकसद देश के शासकों और बुद्धिजीवियों को उन स्थितियों और परिस्थितियों से अवगत कराना है, जिसमें विवश होकर अस्पृश्यों को पलासी से लेकर कोरेगांव तक एक अप्रिय भूमिका अदा करनी पड़ी :

ताकि 21 वीं सदी में फिर वैसी घटनाओं की पुनरावृति न हो। इस मकसद से हमने पहले अध्याय में सन 2000 में प्रकाशित एच.एल.दुसाध की पुस्तक 'आदि भारत मुक्ति : बहुजन समाज'(हिन्दू साम्राज्यवाद के खिलाफ मूलनिवासियों के संघर्ष की दास्तान)' से 'आधुनिक भारत भारत के शिलान्यासी : दुसाध' नामक अध्याय को शामिल किया है।

कोरेगांव युद्ध पूर्व की परिस्थितियां!

जिन परिस्थितियों में महारों को कोरेगांव में अंग्रेजों का संगी बनकर पेशवाओं के खिलाफ हथियार उठाना पड़ा था, उसका जीवंत वर्णन बापू राउत के लेख 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ किस हद तक गिर सकता है : भीमा कोरेगांव से जानें' नामक लेख में हुआ है। राउत ने कोरेगांव युद्ध के पृष्ठ में सामाजिक अन्याय से जुड़े जिन कारणों को चिन्हित किया है , वही कारण घुमा-फिराकर तमाम विद्वानों ने ही चिन्हित किया है। इस पुस्तक में कई विद्वानों ने कोरेगांव युद्ध को क्रांति बताया है। समाज विज्ञानियों के मुताबिक़ क्रान्तिकारी आन्दोलन मुख्यतः असंतोष ,अन्याय,उत्पादन के साधनों का असमान बंटवारा तथा उच्च व निम्न वर्ग के मध्य व्याप्त खाई के फलस्वरूप पनपते हैं। यही क्रांति की निश्चित दशायें (certain conditions) हैं। इन्हीं दशाओं में क्रान्तिकारी आन्दोलन पनपते हैं। बापू राउत ने कहा है,'भीमा कोरेगांव की जड़ें सामाजिक अन्याय तथा वर्ण-व्यवस्था से जुड़े अत्याचारों से सम्बंधित है। शिवाजी महाराज की खूनी हत्या के बाद और उनके पुत्र संभाजी को औरंगजेब द्वारा मारे जाने के बाद उनके राज्य को पेशवाओं ने कूटनीति से हड़प लिया था। सत्ता में आते ही पेशवाओं ने वर्ण व्यवस्था को कड़ाई से पालन करने का आदेश दिया। दलितों को मंदिर, तालाब और शिक्षा के लिए मनाही की गयी थी। दलितों द्वारा सवर्णों का स्पर्श होना पाप समझा जाने लगा। दलितों के रास्ते से फिरते समय थूकने के लिए गले में मटका और पीछे से रास्ता साफ करने के लिए कमर में झाडू बाँधा गया था। उन्हें दिन के 12 बजे के पहले और तीन बजे के बाद रास्तों पर घूमना मना था। उन्हें गाँव के बाहर अत्यंत बेकार अवस्था में रहना पड़ता था। अगर कोई दलित मंदिरों के आसपास भी दिखा,ऐसे समय में उसको देहदंड देने का पेशवा का आदेश था। अगर रास्ते में कोई ब्राह्मण मिलता, उन्हें नीचे पेट पर गिरते हुए हाथ जोड़ने का नियम था।

दूसरे बाजीराव के समय अगर कोई भी दलित पेशवा के तालीमखाने के सामने से गुजरता, तब गुलटेकडी के मैदान में उस दलित के सर को चेंडू और तलवार को डंडा बनाकर खेला जाता। अगर कोई दलित गाँवों में कुएं के पास से गुजरते तो उनकी छाया कुएं पर न पड़े , इसके लिए उन्हें घुटनों पर चलना पड़ता था। उन पर कोई भी अत्याचार करे, उन्हें सहना पड़ता था। इस स्थिति में वे किसी के साथ तकरार नहीं कर सकते थे, क्योंकि उनके पास मानव के कुछ भी अधिकार नहीं थे। नए किले, भवन, पूल, तालाब के निर्माण के समय पायाभरनी में दलितों की बलि दी जाती थी। इतनी क्रूर, क्लेशदायक प्रथा थी। लोक कथाओं में इसके स्पष्ट उल्लेख मिलते हैं।

लेकिन दलितों को इन अत्यचारों को सहन करने के सिवाय दूसरा पर्याय नहीं था। कारण वे आर्थिक तौर पर लाचार थे। कोई भी समूह ऐसा अपमान और अन्याय

कब तक सहेगा? संगी मिलने के बाद वह उठाव तो करेगा ही। दलितों (महारों) की अपनी फ़ौज थी। वे योद्धा थे, लेकिन व्यवस्था से पूरे जकड़े हुए थे। युद्ध के समय सवर्ण सैनिकों का स्पर्श उन्हें वर्ज्य था। युद्ध के दौर में कभी भी साथ में मिलकर खान-पान नहीं होता था। उनके तम्बू अलग हुआ होते थे। खाना अलग से पकाया जाता था। उस समय देश की संकल्पना अस्तित्व में थी ही नहीं। राजे लोग अपने राज्य की सीमाएं बढ़ाने के लिए आपस में लड़ाई करते थे। हिन्दू राजाओं के पास मुस्लिम सैनिक थे। वैसे ही मुस्लिम राजाओं के पास हिन्दू सैनिक हुआ करते थे। जहाँ अच्छा सम्मान और पगार मिल जाता, वहां वे नौकरी करते थे। धर्म और धर्मान्धता का दोयम स्थान था।

1 जनवरी,2018 को अंग्रेज और बाजीराव पेशवा के बीच भीमा नदी के किनारे कोरेगांव युद्ध होने वाला था। युद्ध के पहले दलितों(महारों) ने पेशवाओं के सामने एक प्रस्ताव रखा था-'अगर आपके साथ मिलकर ब्रिटिशों के विरोध में युद्ध लड़ते हैं, तब हमारी सामाजिक, आर्थिक स्थिति में बदलाव और बख़्शीश के तौर पर जमीन दी जाय। लेकिन पेशवाओं ने यह प्रस्ताव ठुकरा दिया। अंततः महार सैनिकों ने अपने सामाजिक बदलाव और आर्थिक हित के लिए ब्रिटिश के साथ मिलकर पेशवा के विरोध में लड़ने का निर्णय लिया (पेज-)।'

पलासी युद्ध पूर्व भी पूंजीभूत हुईं थी : क्रांति की निश्चित दशाएं!

'भारतवर्ष देवोपम आर्य-ब्राह्मणों हिन्दू धर्म-शास्त्रों के विधान द्वारा अस्पृश्यों को पशु से भी अधम बनाकर रख दिया था। निपीड़ित, अत्याचारित अस्पृश्य बहुजन के लिए अस्त्र स्पर्श वर्जित था। अछूतों के हाथ, जो हसुवा हथौड़ी धारण करने के लिए बने थे : उन हाथों में अस्त्र-शस्त्र धारण करना कर्म संकरता का कारक होता है और कर्म-संकरता से महान पवित्र-हिन्दू धर्म की हानि होती है, इसलिए हलधारी अस्पृश्य निरस्त्र होकर सब समय मार खाता रहा, यही उसका धर्म है। अंग्रेजों ने सहस्र वर्षों बाद इन अस्त्र निषिद्ध प्राणियों के हाथों में थमा दी थी बन्दूक और ट्रेनिंग देकर बना दिया था सैनिक और रचित हो गया भारत में सर्वहारा मुक्ति का शुरुआती अध्याय (पेज-)। इसलिए पलासी युद्ध में अस्पृर्श्यों के हथियार उठाने के दूरगामी परिणामों का आंकलन करते हुए महान समाज विज्ञानी कार्ल मार्क्स को लिखना पड़ा-'मूल भारतीय सैन्य-वाहिनी जो ब्रिटिश ड्रिल सर्जेंटों द्वारा गठित व प्रशिक्षण प्राप्त थी,उसने भारतीयों की आत्म-मुक्ति की एक अनिवार्य शर्त पूरा किया एवं इसी के फलस्वरूप वे अपने प्रथम विदेशी आनाधिकार प्रवेशकारियों (First intruders) के अत्यचार के शिकार बनने से बचने के लिए, निज-मुक्ति का सूत्रपात किये।'

शौर्य दिवस का जश्न मनाने के पीछे!

बहरहाल पलासी से लेकर कोरेगांव तक जो लड़ाई लड़ी गयी, उसके नेतृत्व में रहे अंग्रेज और विजय भी उन्ही के खाते में दर्ज हुई, फिर इसे लेकर दलित क्यों जश्न मनाते

हैं, यह प्रश्न लोगों के जेहन में उभर सकता है!इसका जवाब इन युद्धों के परिणामों में छिपा है। पलासी युद्ध के असर पर आलोकपात करते हुए सुप्रसिद्ध दलित इतिहासकार एसके बिस्वास ने लिखा है-'अगर पलासी युद्ध में दुसाध अपनी भूमिका ग्रहण नहीं किये होते, अस्पृश्य बहुजन के भाग्याकाश में मुक्ति का सूर्योदय नहीं होता। न ही जन्म ग्रहण करते डॉ.आंबेडकर और बाबू जगजीवन राम, न ही हमलोग देख पाते मान्यवर कांशीराम,बहन मायावती और राम विलास पासवान, लालू यादव, मुलायम सिंह यादव जैसों को । पलासी युद्ध के अस्पृश्य 'दुसाधों' के रक्तस्रोत और प्राण बलिदान की उर्वरक भूमि से ही उठकर मंत्री के सिंहासन पर आरूढ़ हुए थे,डॉ.आंबेडकर 1942 में लेबर मंत्री बनकर। सन 1946 में अंतरवर्तीकालीन सरकार में मंत्री बने थे बाबू जगजीवन राम एवं 1947 में भारत के प्रथम कानून मंत्री का पद अलंकृत किये थे, डॉ.आंबेडकर। आज के दिनों का दलित-बहुजन समाज का संघर्ष और कुछ नहीं, पलासी युद्ध में उनके पूर्व-पुरुषों के हथियार उठाने की परिणत अवस्था मात्र है (पेज-)।' जहाँ तक कोरेगांव का युद्ध पर गर्व करने का प्रश्न है, उसका योग्य उत्तर दिया है राजवंशी जे.ए.आंबेडकर ने। उन्होंने कहा है,' यह लड़ाई भले ही अंग्रेजी काल में हुई थी जिसके नेतृत्व में जरुर थे अंग्रेज,लेकिन यह लड़ाई कोरेगांव एवं महाराष्ट्र के मूल लोगों की थी। यह लड़ाई सत्ता में भागीदारी की थी। हजारों युद्ध हुए हैं भारतीय इतिहास में, मगर ऐसे युद्ध के जश्न की जरुरत इसलिए पड़ती है क्योंकि यह सिर्फ युद्ध नहीं था। यह था क्रान्ति,यह था ज्वाला : यह था मौका मिलने पर अपने पराक्रम को दिखाने का अवसर। यह दौर था जब लोगों को अनाज मिले, महिलाओं को वस्त्र मिले। यह कोरेगांव युद्ध नग्नता, शोषणता, भष्टाचार, वश्यता के खिलाफ : सबको रोटी ,सबको हक़,सबको कपड़ा का था। तो क्यों न हो ऐसे युद्ध के जीत का जश्न(पेज-) मनाएं।' बहरहाल कोरेगांव का जो विजय स्तम्भ दलितों के शौर्य प्रदर्शन का प्रतीक है, उसके प्रति देश के प्रभुवर्ग में हिकारत का भाव क्यों हैं, यह बात लोगों को विस्मित कर सकती है। इसका सठिक उत्तर दिया है चर्चित बहुजन चिन्तक प्रेम कुमार मणि ने।

इतिहास की अभिनव व्याख्या!

मणि जी ने लिखा है-'हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन में इस स्मारक को हमने राष्ट्रीय हार के स्मारक के रूप में देखा है। हमने राष्ट्रीय आन्दोलन का ऐसा ही स्वरुप निर्धारित किया था। लेकिन आंबेडकर ने कोरेगांव की घटना को दलितों, खासकर महारों के शौर्य-प्रदर्शन के रूप में देखा। यह इतिहास की अभिनव व्याख्या थी, वैज्ञानिक भी। तब से कोरेगांव के विजय को दलित-विजय दिवस के रूप में बहुत से लोग याद करते हैं। और इन्हें याद करने का अधिकार भी होना चाहिए। कोरेगांव के बहाने हम अपने देश के इतिहास का पुनरावलोकन कर सकते हैं। क्या कारण रहा कि हम ने अपनी पराजयों के कारणों की खोज में दिलचस्पी नहीं दिखाई। हम तुर्कों, अफगानों, मुगलों, अंग्रेजों और चीनियों से लगातार क्यों हारते रहे। हमने अपनी बहादुरी और मेधा के लिए पीठ खुद थपथपाई और मग्न रहे। हम ने तो बुद्ध को बाहर कर दिया और वेद

सहित समग्र संस्कृत साहित्य को कूड़ेदान में डाल दिया। हाँ, मनुस्मृति को नहीं भूले। हमने एडविन अर्नाल्ड के द्वारा बुद्ध को जाना और मैक्स मूलर के जरिये वेदों को। लगभग समग्र संस्कृत साहित्य की खोज-ढूंढ यूरोपियनों ने की। हमने तो केवल नफरत करना सीखा और सीखलाया। यही हमारा जातीय संस्कार हो गया है। इसे ही आप हिंदुत्व कह सकते हैं। (पेज) बहरहाल यह अच्छा संकेत है कि मणि जी ने इतिहास की जो अभिनव व्याख्या प्रस्तुत की है, उसे फेसबुक पर विद्वान पाठकों का अपार समर्थन मिला : किसी ने खास सवाल नहीं उठाया (पेज-)।

क्या दलितों की भूमिका देशद्रोही की रही!

बहरहाल चूँकि हिंदुत्ववादी कोरेगांव जैसे प्रतीकों को राष्ट्रीय पराजय के रूप में देखने की मानसिकता विकसित कर लिए हैं, इसलिए पलासी से लेकर कोरेगांव तक तक के युद्धों में दलितों की भूमिका को वे देश-द्रोहिता के रूप में देखते रहे हैं। इसलिए दलितों का अपने पुरुखों के शौर्य पर जश्न मनाना, उन्हें फूटी आँखों से भी नहीं सुहाता। लिहाजा वे उस किस्म का काण्ड अंजाम दे देते हैं, जो उन्होंने 1 जनवरी, 2018 को अंजाम दिया। लेकिन क्या दलितों की भूमिका देशद्रोही की रही, इस सवाल का खुद सामना करते हुए डॉ.आंबेडकर ने मुंहतोड़ जवाब दिया है। उन्होंने कहा है-'अनेक इतिहासकार ही अस्पृश्यों के इस आचरण को देशद्रोहिता करार देते हैं। देशद्रोह अथवा ना-देशद्रोह जो भी क्यों न हो, अस्पृश्यों के क्षेत्र मंल यह आचरण यथार्थ ही नैसर्गिक है। इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं जब यह देखा गया है कि एक निपीड़ित अंश विदेशी आक्रमणकारियों के प्रति सहानुभूति एवं सहायता प्रदान किया है, केवल मात्र स्वदेशियों के अत्यचार से बचने के लिए।' (पेज-) वास्तव में विश्व इतिहास ऐसी भूरि-भूरि घटनाओं से भरा है, जब पाते हैं कि अपने ही देश के लोगों के अत्याचार से निजात पाने के लिए लोगों ने विदेशी आक्रमणकारियों को सोत्साह स्वागत किया। इस क्रम में मध्य से आधुनिक काल में ढेरों राष्ट्रों के ध्वंस और निर्माण का इतिहास रचित हुआ।

स्पैनिस आक्रान्ता हर्नेन कोर्ट ने शोषित स्वदेशी लोगों के सहयोग से ध्वस्त किया : अजटेक साम्राज्य!

मध्य युग में शोषित, अत्याचारित लोगों के सहयोग से स्पेन के एक आक्रान्ता ने कैसे एक छोटी सी फौजी टुकड़ी के सहारे अजटेक साम्राज्य को ध्वस्त कर दिया, इसका बड़ा ही रोचक विवरण 'विश्व इतिहास की झलक' के संक्षिप्त संस्करण (प्रकाशक, सस्ता साहित्य, नयी दिल्ली,पृष्ठ 115-16) में पंडित जवाहर लाल नेहरु ने प्रस्तुत किया है। विश्व की तमाम सभ्यताओं का भ्रमण करते हुए जब नेहरु अमेरिका पहुँचते हैं तो उन्हें 'मय' सभ्यता का दर्शन होता है और इसका दामन थामकर कर वह आगे बढ़ते हैं तो एक संघ, मयपान-संघ के साक्ष्य मिलते हैं। इसके विषय में उन्होंने लिखा है-:

'मध्य-अमेरीका के तीन मुख्य राज्यों ने मिलकर एक संघ बनाया था, जिसे 'मयपान-संघ' कहते थे। यह ईशा से ठीक एक हजार वर्ष के आसपास की बात है। इस तरह यह साफ़ है कि ईशा के एक हजार वर्ष बाद मध्य अमेरिका में सभ्य राज्यों का एक शक्तिशाली संगठन था। लेकिन इसके सारे राज्यों पर 'और खुद मय' सभ्यता पर, पुरोहित लोग हावी थे। ज्योतिष सबसे प्रतिष्ठित विज्ञान माना जाता था, और इस विज्ञान को जानने वाले होने की वजह से पुरोहित लोग जनता के अज्ञान से फायदा उठाते थे।

मयपान का यह संघ सौ वर्ष से अधिक रहा। जान पड़ता है कि इसके बाद एक सामाजिक क्रान्ति हुई। सन 1190 ई. के लगभग मयपान नष्ट हो गया, लेकिन दूसरे शहर बने रहे। इसके बाद सौ साल के भीतर एक दूसरी जाति के लोग वहां आ गए। ये लोग मैक्सिको से आये थे और 'अजटेक' कहलाते थे। इन लोगों ने चौदहवीं सदी के शुरू में मय देश को जीत लिया और सन 1325 ई. के लगभग टेनोचटिटलन नाम का नगर बसाया। जल्द ही यह सारे मैक्सिको और अजटेक साम्राज्य का केंद्र बन गए। इस शहर की आबादी बहुत बड़ी थी।

अजटेक लोग एक सैनिक कौम के थे। इन लोगों ने सैनिक बस्तियां बसाई, छावनियां बनाएँ और फौजी सड़कों का जाल बिछा दिया। यहाँ तक कहा जाता है कि ये इतने चालाक थे कि अपने मातहत राज्यों को आपस में लड़ाते रहते थे। आपसी फूट के कारण उनपर शासन करना ज्यादा आसान था। दूसरी बातों में चालाक होने के बावजूद अजटेक लोग धर्म के मामले में पुरोहितों के बंधन में जकड़े हुए थे, और इससे बुरी बात यह थी कि उनके मजहब में आदमियों की कुर्बानियां बहुत होती थीं। हर साल धर्म के नाम पर हजारों आदमी खौफनाक तरीके से बलि चढ़ा दिए जाते थे।

लगभग दो सौ वर्ष तक अजटेक अपने साम्राज्य पर डंडे की जोर से कठोर शासन किया। साम्राज्य में जाहिरा सुरक्षा व शान्ति थी, लेकिन जनता बेरहमी से निचोड़ी और लूटी जाती थी। जो राज्य इस तरह बना हो और इस तरह चलाया जाय, वह बहुत दिनों तक कायम नहीं रह सकता, और यही हुआ। सोलहवीं सदी के शुरू में यानी 1511 ई.में, जब अजटेक लोग अपनी शक्ति के सबसे ऊंची चोटी पर दिखाई देते थे, उनका साम्राज्य मुट्ठी भर लूटेरे और दुःसाहसी विदेशियों के हमले से भरभरा कर गिर पड़ा। स्पेन निवासी हर्नेन कोर्ट ने सिपाहियों की एक छोटी टुकड़ी की मदद से इस साम्राज्य को नष्ट कर दिया। कोर्ट बहादुर आदमी था और उसमे काफी साहस था। उसके पास दो चीजें थीं, जिनसे उसे बड़ी मादद मिली-बंदूकें और घोड़े। मालूम होता है की मैक्सिको शहर में घोड़े नहीं थे और बंदूकें तो निश्चित ही नहीं थीं। किन्तु अगर अजटेक साम्राज्य की जड़ें खोखली न होतीं, तो कोर्ट की हिम्मत और न बंदूकें और न घोड़े ही किसी काम में आते। इस साम्राज्य का ऊपरी ढांचा तो कायम था लेकिन अन्दर से खोखला हो चुका था। इसलिए इसे गिराने को जरा सी ठोकर की जरूरत थी। यह साम्राज्य जनता के शोषण की नीव पर बना था; इसलिए लोग उससे बहुत असंतुष्ट थे। इसलिए जब उस पर हमला हुआ तो आम जनता साम्राज्यवादियों की इस परेशानी पर खुश हुई और जैसा अक्सर होता है, इसके साथ ही एक सामाजिक क्रांति भी हुई।

एक दफा तो कोर्ट खदेड़ दिया गया और मुश्किल से वह अपनी जान बचा पाया। लेकिन वह फिर लौटा और वहां के कुछ लोगों की मदद से उसने फतह पाई। इससे अजटेक शासन का अंत तो हुआ ही, लेकिन मजेदार बात यह है कि साथ ही साथ मैक्सिको की सारी सभ्यता लड़खड़ा कर गिर पड़ी और थोड़े ही समय में उस शाही और विशाल राजधानी टेनोचटिटनल का निशान तक बाकी नहीं रहा। उसकी एक ईंट भी आज नहीं बची। उसकी जगह स्पेन वालों ने गिरिजाघर बनाया। मय सभ्यता के दूसरे बड़े शहर भी नष्ट हो गए और यूकेतान के जंगलों ने उन्हें ढक लिया,यहाँ तक कि उनके नाम भी बाकी न रहे। बहुत से शहरों की स्मृति आजकल उनके पड़ोस के गाँवों के नामों में बाकी रह गयी है। उनका सारा साहित्य भी नष्ट हो गया है और केवल तीन किताबें बंची रह गयीं हैं, और उन्हें भी आज तक कोई पढ़ नहीं सका।'

साम्राज्यवाद के प्रति दलित दृष्टिकोण : प्रो. वीरभारत तलवार

हाल के वर्षों में इराक युद्ध में वहा के स्थानीय कुर्दो ने अमेरिका का साथ देकर, साबित कर दिया की यदि जनता का एक समूह स्वदेशी शासकों द्वारा शोषित वंचित होगा, वह वह अपनी मुक्ति के लिए विदेशियों का साथ देने जैसा अप्रिय निर्णय ले ही सकता है, इसका दृष्टांत प्रो. वीरभारत तलवार ने प्रस्तुत किया है। उन्होंने साम्राज्यवाद के प्रति दलित दृष्टिकोण पर प्रकाश डालते हुए (सामाजिक परिवर्तन में बाधक हिंदुत्व, एच. एल. दुसाध, पृष्ठ : 14-15) हुए इस घटना को जिस रूप में उद्धृत किया है, वह काबिलेगौर है। उन्होंने लिखा है -: '19 वीं सदी में भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों और तबकों ने अपने-अपने स्वार्थों से अंग्रेजी राज का स्वागत और समर्थन किया था और कुछ वर्ग अंत तक करते रहे। जो वर्ग और समुदाय उसके खिलाफ लड़ रहे थे, वे भी अक्सर अपने स्वार्थ से ही लड़ रहे थे। अपने इन्ही वर्ग स्वार्थों की वजह से उन्होंने इस लड़ाई में शामिल होने वाले दलितों और शूद्रों को, मजदूरों और किसानों को आगे बढ़ने नहीं दिया, कभी नेतृत्व में आने नहीं दिया।

दलित की कसौटी पर साम्राज्यवादवाद विरोधी संघर्ष की परम्परा खरी नहीं उतरती। गुलामी सिर्फ राजनीतिक नहीं, सामाजिक भी होती है। बाज वक्त सामाजिक दमन और उत्पीड़न राजनीतिक दमन और उत्पीड़न से कहीं ज्यादा बर्बर और असहनीय होता है। राजनीतिक गुलामी के खिलाफ लड़ने वालों को की जय-जयकार होती है, वे लोगों के हीरो बन जाते हैं और अंत में सत्ता भी पाते हैं। लेकिन सामाजिक गुलामी के खिलाफ लड़ने वाले समाज द्वारा बहिष्कृत और प्रताड़ित किये जाते हैं, अक्सर घर के लोग भी उन्हें छोड़ देते हैं। वास्तव में राजनीतिक गुलामी के खिलाफ लड़कर जीतना उतना कठिन नहीं होता, जितना सामाजिक गुलामी के खिलाफ लड़कर जीतना। यही वजह है कि कांग्रेस के नेतृत्व में 50-60 साल तक आन्दोलन चलाकर द्विज समाज ने अंग्रेजों की राजनीतिक गुलामी से आजादी पा ली, लेकिन दलित आज भी द्विजों की सामाजिक गुलामी से पूरी तरह आजाद नहीं हो पाए हैं। इसलिए राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन की जो कथा आज भी बहुत गौरव के साथ कही-सुनी जाति है, उस कथा में गहरे रद्दोबदल

की जरुरत है। जो द्विज समाज करोड़ों दलित्तों-शूद्रों को स्वाधीन करने को तैयार नहीं था, उसे अंग्रेजों से स्वाधीनता मांगने का क्या हक़ था?

साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष की परम्परा में इस सवाल का जवाब नहीं मिलता। यहाँ मकसद साम्राज्यवाद की विरोधी संघर्ष को कमजोर करना बताना नहीं है, बल्कि इसके उलट, उसकी गहरी कमियों की ओर ध्यान खीचना है जिसकी ओर इस परम्परा की कीर्तन मंडली का ध्यान नहीं जाता। हमें और यथार्थवादी बनने की जरुरत है। समाज के अंदरूनी अंतर्विरोधों पर पर्दा डालकर या उन्हें नजरअंदाज करके सभी लोगों को साम्राज्यवाद के खिलाफ एकजुट नहीं किया जा सकता। इस सिलसिले में आज ईराक की स्थिति को देखना चाहिए। क्या वहां कुर्दों ने हमलावर अमेरिका का स्वागत नहीं किया?तो क्या ये सब गलत थे?साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष का मंत्रजाप करते हुए एक सिरे से इन सबकी निंदा की जा सकती है? माओत्से तुंग ने कहा था कि विदेशी हमले और प्रत्यक्ष विदेशी शासन के दौरान देश के अन्दर के जो अंतर्विरोध पहले प्रधान थे, वे अब गौण पड़ जाते हैं और साम्राज्यवाद के साथ अंतर्विरोध ही सबसे प्रधान हो जाता है। लेकिन इसका यह मतलब हरगिज नहीं कि अंदरूनी अंतर्विरोधों से आँख मूंदकर, उन्हें नजरंदाज कर, प्रधान अंतर्विरोध को हल किया जा सकता है। वास्तव में अंदरूनी अंतर्विरोधों में उलझे हुए विभिन्न वर्गों और समुदायों के हितों और दावों के बीच एक उचित और न्यायपूर्ण सामंजस्य बैठाकर, एक समझौते की शक्ल तैयार करके ही उन सबको साम्राज्यवाद के खिलाफ एक साथ लाया जा सकता है। अन्यथा वही होगा जो इराक में हो रहा है या 19 सदी में एक तरह से भारत में हुआ।'

इक्कीसवी सदी में आज की तारीख मौजूद हैं : कोरेगांव युद्ध पूर्व की परिस्थितियां!

बहरहाल पुस्तक की सम्पादकीय के शुरुआत में ही बताया गया है कि इस पुस्तक को पाठकों के बीच लाने का मकसद देश के शासकों और बुद्धिजीवियों को उन स्थितियों और परिस्थितियों से अवगत कराना है, जिसमें विवश होकर अस्पृश्यों को पलासी से लेकर कोरेगांव तक एक अप्रिय भूमिका अदा करनी पड़ी : ताकि 21 वीं सदी में फिर वैसी घटनाओं की पुनरावृति न हो। यदि हम ध्यान से आज की तारख में देश की सामाजिक-आर्थिक हालात पर गौर करें तो पाएंगे कि वर्तमान में वे सारी स्थितयां और परिस्थितियां पैदा हो चुकी है हैं, जिनसे विवश होकर पलासी और कोरेगांव युद्ध में दलितों को अप्रिय भूमिका में उतरना पड़ा था।

जनवरी, 2018 में आई ऑक्सफाम की रिपोर्ट, जिसमें यह बताया गया था कि देश की सृजित दौलत का 73% हिस्सा टॉप की 1% आबादी वाले लोगों के हाथ में चला गया है, ने भयावह आर्थिक विषमता का संकेत कर दिया है। ऐसा नहीं कि पहली बार ऐसा हुआ। आर्थिक विषमता की भयावह तस्वीर तो 2015 में ही सामने आ गयी थी, जब वैश्विक धन बँटवारे पर काम करने वाली 'क्रेडिट सुइसे' की रिपोर्ट में यह तथ्य उभर कर आया कि देश के टॉप 1% लोगों के हाथ में 57% और टॉप की 10% आबादी के पास 81% दौलत है रू नीचे की 50% आबादी सिर्फ 4.1% दौलत पर गुजर बसर करने के लिए विवश है। बहरहाल जनवरी में आई ऑक्सफाम की रिपोर्ट

खरते की खंती इसलिए है क्योंकि इसने आर्थिक विषमता में अभूतपूर्व उछाल संकेत कर दिया है। काबिले गौर है कि कई अंतरराष्ट्रीय अध्ययनों के मुताबिक टॉप की 1% आबादी के पास 2000 में 37% हुआ करती थी, जो 2005 में बढ़कर 42%, 2010 में 48%, 2012 में 52% तथा 2016 में 58% हो गयी। इससे जाहिर है कि 2000-2016 अर्थात 16 सालों में 1% वालों की दौलत में कुल इजाफा 21% का हुआ, जबकि 2016 के 58 के मुक़ाबले 2017 में 73% पहुचने का मतलब हुआ कि एक वर्ष में उनकी दौलत में सीधे 15% की बढ़ोतरी हो गयी। जिस तरह 1%की आबादी की दौलत एक वर्ष में 15% का इजाफा हुआ है, उससे मानकर चलना चाहिए की 2015 में टॉप की जिस आबादी का देश की 81% धन-दौलत पर कब्ज़ा था, वह बढ़कर 90% से ज्यादा हो गया है।

इस टॉप की 10% आबादी में प्रायः 99.9 % आबादी उस जन्मजात विशेषाधिकारयुक्त सुविधाभोगी तबके से है, जिसका सदियों से शक्ति के स्रोतों (आर्थिक-राजनीतिक-शैक्षिक-धार्मिक) पर एकाधिकार रहा। आज के आधुनिक विश्व में जहाँ प्राचीन सुविधाभोगी तबका इतिहास में विलीन हो गया, भारत में उसी तबके का अर्थ-सत्ता,ज्ञान-सत्ता,धर्म सत्ता पर 90% से ज्यादा कब्ज़ा हो गया है। ऐसे हालात में ऑक्सफाम की रिपोर्ट एक आर्थिक जलजला बनकर सामने आई है। यदि हम इससे अब भी सावधान नहीं हुये तो सदियों के शोषित-निष्पेषित दलित, आदिवासी , पिछड़े और इनसे धर्मांतरित बहुजन निकट भविष्य में ही भिखारी और पशुओं की जिंदगी जीने के लिए विवश हो जाएंगे और शायद इस देश की बची खुची शांति, प्रभुसत्ता बुरी तरह खतरे पड़ जाएगी। स्मरण रहे आर्थिक विषमता की कोख से ही भूख, कुपोषण, अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, विच्छिन्नता और आतंकवाद इत्यादि समस्यायों का जन्म होता है। इस बात को दृष्टिगत रखते हुये ही बाबा साहेब डॉ, आंबेडकर ने 25 नवंबर 1949 को संसद के केंद्रीय कक्ष से राष्ट्र को सावधान करते हुये कहा था कि हमें निकटतम समय के मध्य आर्थिक और सामाजिक विषमता का खत्मा कर लेना होगा नहीं तो विषमता से पीड़ित जनता लोकतन्त्र के उस ढ़ाचे को विस्फोटित कर सकती है,जिसे संविधान निर्मात्री सभा ने इतनी मेहनत से बनाया है। इसके भयावह परिणामों से ही चिंतित ऑक्सफाम इंडिया की सीईओ निशा अग्रवाल ने ताजी रिपोर्ट पर कहा है-'अरबपतियों की बढ़ती संख्या अच्छी अर्थव्यवस्था का नहीं, ख़राब होती अर्थव्यवस्था का संकेत है। जो लोग कठिन परिश्रम करके देश के लिए भोजन उगा रहे हैं, इन्फ्रास्ट्रक्चर का निर्माण कर रहे हैं, फैक्टरियों में काम कर रहे हैं, उन्हें अपने बच्चों की फीस भरने, दवा खरीदने और दो वक्त का खाना जुटाने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। अमीर-गरीब के बीच बढती खाई लोकतंत्र को खोखला कर रही है और भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रही है।' इस कारण ही 2015 में क्रेडिट सुइसे की रिपोर्ट प्रकाशित होने के बाद बहुत से अखबारों ने लिखा था—'गैर-बराबरी अक्सर समाज में उथल-पुथल की वजह बनती है। सरकार और सियासी पार्टियों को इस समस्या को गंभीरता से लेना चाहिए। संसाधनों और धन का न्यायपूर्ण बंटवारा कैसे हो, यह सवाल अब प्राथमिक महत्व का हो गया है।'

इसमें कोई शक नहीं कि तमाम वर्तमान हालात इंगित कर रहे हैं कि देश में

कोरेगांव युद्ध पूर्व की स्थितियां और परिस्थितिया पैदा हो गयी हैं, जिनका निराकरण सिर्फ और सिर्फ धन-दौलत के न्यायपूर्ण बंटवारे से ही संभव है। क्या हमारे हुक्मरान 21वीं सदी में कोरेगांव की स्थिति टालने के लिए धन-दौलत के न्यायपूर्ण बंटवारे को प्राथमिक महत्त्व का विषय बनायेंगे!

और अंत में! 28 अगस्त, को जब ज्यादातर लोग नींद में होंगे पुणे पुलिस की टुकड़ियों ने देश के विभिन्न अंचलों से मशहूर कवि बारबरा राव, आदिवासियों के लिए संघर्षरत सुधा भारद्वाज, नामी पत्रकार गौतम लखा, मानवाधिकारों के लिए संघर्षशील वेर्नोन गोंजालएस व अरुण फ्रेइरा को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की हत्या की साजिश रचने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया। ये ऐसे लेखक बुद्धिजीवी हैं, जो अन्याय के खिलाफ बोलते, लिखते हैं और जरुरत पड़ने सड़क पर भी उतरते हैं, लेकिन इनकी एक बड़ी साम्यता ये है कि ये सभी वामपंथी हैं और पुलिस का आरोप यह है कि ये 31 दिसंबर, 2017 को पुणे के शनिवारवाडा में आयोजित यलगार परिषद् की बैठक में शामिल हुए थे। ऐसा करके अयोध्या मंदिर के सामानांतर, जो कोरेगांव दलित अस्मिता के प्रतीक के रूप में विकसित हो रहा है, उसकी गरिमा को म्लान करने की एक साजिश हुई है। कारण, भारत के वामपंथी सवर्ण हैं, जिन्हें बहुत से दलित बुद्धिजीवी सवर्णों का सबसे शातिर गिरोह मानते हैं। ये अपनी जमीन खो चुके हैं, इसलिए कल तक डॉ. आंबेडकर को गाली देने तथा आरक्षण को कथित वर्ग संघर्ष में बाधक मानने वाले वामपंथी आज दलितों में पैठ बनाने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन कहावत है कि रस्सी जल गयी, पर उसकी ऐंठन नहीं गयी, वही हाल इनका है।

21 वीं सदी में शक्ति के समस्त स्रोतों का, सभी समाजों के संख्यानुपात में हिस्सेदारी के लिए दलित जो लोकतान्त्रिक आन्दोलन चला रहे हैं, उससे इनका कोई सरोकार नहीं है। ये शातिर सवर्णवादी दलितों के लिए सिर्फ भूमि में हिस्सेदारी की मांग उठाते हैं। ये भलीभांति जानते हैं कि आज की तारीख में दलित आन्दोलनकारी नौकरियों से आगे बढ़कर सप्लाई, डीलरशीप, ठेकों, पार्किंग-परिवहन, फिल्म-मीडिया, आउट सोर्सिंग जॉब इत्यादि धनार्जन के समस्त स्रोतों में तमाम वंचित समाजों की संख्यानुपात में हिस्सेदारी की जो मांग उठा रहे हैं, उससे उनका वर्गीय हित विघ्नित होगा। इसलिए वे जमीन के बंटवारे से आगे बढ़ते ही नहीं। ऐसे में कहा जा सकता है, इनका दलित आन्दोलन से कोई खास लेना-देना नहीं हैंरू अब भी उनका आंबेडकरवाद के प्रति दुराग्रह बरकारार है। इसीलिए मयंक सक्सेना के लेख 'सुनो वामपंथियों!' (पेज-), Sobran kabir yadav की 'इनके चेहरों में आखिर क्या है!' (पेज) और dilip c mandal की टिपण्णी 'ये मामूली लोग नहीं हैं' (पेज-) में एक अलग टोन सुनाई पड़ता है।

और अंत में! एच.एल. दुसाध, प्रेम कुमार मणि, दिलीप मंडल, मयंक सक्सेना, चंद्रभूषण सिंह यादव, डॉ. लाल रत्नाकर, बापू राउत, राजवंशी जे.ए. आंबेडकर, अनिल चमडिया, प्रो. रतन लाल, राम पुनियानी, अरुंधती राय सहित फेसबुक सक्रिय उन विद्वानों के प्रति आभार, जिनकी टिप्पणियों से यह पुस्तक समृद्ध हुई है।

दिनांक : 28 अक्तूबर, 2018 (तेरहवां डाइवर्सिटी डे)—**फ्रैंक हुजूर**

अध्याय-1

भीमा कोरेगांव के 60 साल पहले : पलासी

आधुनिक भारत के शिलान्यासी : दुसाध

–एच.एल. दुसाध

गोसाईंजी, यह अच्छा ही हुआ आपने हमारी दुसाध जाति के विषय में कुछ कहने के लिए एक दैनिक पत्र की कटिंग संलग्न कर दी थी, जिसे दुर्भाग्यवश मैं खो चुका हूं। अतः उसे आपके पत्र के साथ प्रकाशित नहीं कर पाऊंगा। आप दुसाधों का प्रसंग न भी छेड़ते तो भी मैं इस अध्याय को लिखता ही। कारण आधुनिक भारत के इतिहास में दुसाधों की भूमिका का हवाला देकर, आर्य पुत्र हमारे बहुजन समाज, विशेषकर दलित बहुजन का मनोबल तोड़ने के ही लिए वर्षों से कलम चलाते रहे हैं। इसी कुत्सित उद्देश्य से जब अरुण शौरी की worshipping false gods बाजार में आई; हमारे बहुजन साहित्यकारों ने उस पुस्तक का मुंहतोड़ जवाब देते हुए सैकड़ों किताबें लिख डाली। किन्तु उत्तर देते समय कुछेक को छोड़कर शेष दलित साहित्यकार दुसाधों की कथित 'देशद्रोहिता' का उत्तर देने से कतरा गये, पर मैं नहीं भाग रहा हूं।

आपने अपने पत्र के साथ गोरखपुर में आयोजित, दुसाध महासम्मेलन की किसी दैनिक पत्र में छपी रिपोर्ट की, कटिंग भी भेजी थी। मैंने पढ़ा। कहने में संकोच नहीं कि रिपोर्ट पढ़कर अपनी बिरादरी के अग्रणी लोगों पर, फिर एक बार तरस आया। इस सम्मेलन में भी वक्ताओं ने घुमा-फिराकर, इस मिथ्या सत्य को ही स्थापित करने का प्रयास किया है कि हम अतीत की मूलतः अत्यन्त लड़ाकू राजपूत जाति के वंशधर हैं, अर्थात् हमारी धमनियों में आर्य रक्त प्रवाहित हो रहा है। गोसाईंजी, कुछ दिन पूर्व ही मैंने 'गहलौत (दुसाध) जाति का इतिहास' नामक पुस्तक पढ़ी है। इस पुस्तक में लेखक महोदय ने बहुत ही यत्नपूर्वक यह सत्य प्रतिष्ठित करने की कोशिश की है कि हम दुसाध, सूर्यवंशी मर्यादा पुरुषोत्तम राम के ही वंशधर हैं। निष्कर्ष वहीं घुमा फिर कर हमारी जाति को आर्य बताने की प्रचेष्टा। गोसाईंजी, मैंने इस पत्र के प्रारम्भिक अध्याय में कहीं लिखा है; भारतीय समाज सिर्फ चार वर्णों में ही नहीं बल्कि जाति/उपजाति की लगभग 6000 से अधिक टुकड़ों में विभक्त है। आर्यों की परिकल्पनानुसार भारतीय अनार्य बहुजन, जाति से उपजातियों में बंटा बहुजन जब अपनी सोच को वृहत्तर रूप देता है, तब कहीं जाकर जाति स्तर पर मिलीत होता है। फलतः यादव, कुर्मी, नोनियां, डोम, चमार, दुसाधादि संघ परिलक्षित होते हैं। इन संघों के सम्मेलनों में वक्ता मात्र

Continue Your Reading Journey

This preview has ended. Access the complete library and support our mission.

Join Our Inclusive Reading Community

✓ We champion diverse voices and perspectives
✓ Your support helps amplify underrepresented authors
✓ We provide free access to educational institutions
✓ Building bridges through shared stories
✓ Creating space for all narratives to be heard

Support Our Mission

Your donation enables us to:
• Curate diverse book collections
• Support authors from marginalized communities
• Provide free resources to educators
• Maintain our accessible digital library

Visit: www.diversitymission.in

Sign the diversity pledge • Make a donation • Download full library